संस्करण - 6 अंक - 3 जुलाई 2026

प्रज्ञाम्बु

cGanga
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा संचालित गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga) की इस त्रैमासिक पत्रिका का उद्देश्य जल और नदी पुनरुद्धार एवं संरक्षण के प्रबंधन से संबंधित विभिन्न विषयों पर देश-विदेश से उपलब्ध पारंपरिक ज्ञान एवं विज्ञान के समन्वय पर आधारित जानकारी संबंधित संस्थाओं एवं नागरिकों तक पहुचाना है।

उपचारित अपशिष्ट जल का सर्वोत्तम उपयोग: अवसर, चुनौतियाँ और भारतीय संदर्भ में पुनर्विचार

[प्रश्न केवल पुनः उपयोग का नहीं, सर्वोत्तम उपयोग का है]

पिछले अंक में हमने यह विचार रखा था कि उपचारित अपशिष्ट जल को केवल एक वैकल्पिक जल स्रोत के रूप में नहीं, बल्कि नदियों, आर्द्रभूमियों, भूजल तंत्रों तथा पारिस्थितिक प्रणालियों के पुनर्जीवन के एक संभावित साधन के रूप में भी देखा जाना चाहिए। किंतु जैसे ही उपचारित जल के पुनः उपयोग की चर्चा होती है, एक महत्वपूर्ण प्रश्न सामने आता है—क्या इसका उपयोग सीधे कृषि, उद्योग अथवा अन्य उपभोग क्षेत्रों में किया जाना चाहिए, अथवा इसका मुख्यतः उपयोग पारिस्थितिक पुनर्स्थापन के लिए सुरक्षित रखा जाना चाहिए?

इस प्रश्न का उत्तर सरल नहीं है। इसके साथ जनस्वास्थ्य, मृदा स्वास्थ्य, जल गुणवत्ता, ऊर्जा, अर्थव्यवस्था, सामाजिक स्वीकार्यता तथा दीर्घकालिक पारिस्थितिक स्थिरता जैसे अनेक आयाम जुड़े हुए हैं। इसी चर्चा को आगे बढ़ाते हुए इस भाग मे हम उपचारित जल के उपयोग से जुड़े लाभ, चुनौतियाँ, सीमाएँ और संभावित जोखिमों का भारतीय संदर्भ में विश्लेषण पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

जनस्वास्थ्य उत्तरदायित्व एवं संस्थागत दायित्व: सुविधा से पहले सुरक्षा

उपचारित अपशिष्ट जल के पुनः उपयोग की चर्चा प्रायः जल उपलब्धता, संसाधन संरक्षण और आर्थिक लाभ के संदर्भ में की जाती है, किंतु इसके साथ जुड़ा एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न अक्सर चर्चा से बाहर रह जाता है - यदि उपचारित जल के उपयोग से जनस्वास्थ्य प्रभावित होता है, तो उसकी जिम्मेदारी किसकी होगी?

भारत में अनेक स्थानों पर आज भी सीवेज उपचार संयंत्र (STPs) अपनी निर्धारित क्षमता से कम कार्य कर रहे हैं या उनकी गुणवत्ता निगरानी नियमित रूप से नहीं हो पाती। ऐसी स्थिति में यदि शहरी निकाय, राज्य सरकारें अथवा अन्य सार्वजनिक संस्थाएँ कृषि में अनुपचारित, आंशिक रूप से उपचारित या अपर्याप्त रूप से उपचारित जल के उपयोग को प्रोत्साहित करती हैं, तो वे केवल जल प्रबंधन का निर्णय नहीं ले रही होतीं, बल्कि लाखों लोगों के स्वास्थ्य से जुड़ा निर्णय भी ले रही होती हैं।

वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि उपचारित जल में कभी-कभी रोगजनक सूक्ष्मजीव (Pathogens), एंटीबायोटिक प्रतिरोधी जीवाणु (Antibiotic Resistant Bacteria), औषधीय अवशेष (Pharmaceutical Residues), अंतःस्रावी तंत्र को प्रभावित करने वाले रसायन (Endocrine Disrupting Chemicals), भारी धातुएँ, माइक्रोप्लास्टिक तथा अन्य उभरते प्रदूषक (Emerging Contaminants) मौजूद रह सकते हैं। इनका प्रभाव केवल खेत तक सीमित नहीं रहता, बल्कि एक विस्तृत श्रृंखला के माध्यम से पूरे समाज तक पहुँच सकता है।

उपचारित जल का उपयोग सुविधा का विषय हो सकता है, किंतु जनस्वास्थ्य से समझौता नहीं। यदि जल की गुणवत्ता, निगरानी और उत्तरदायित्व सुनिश्चित न हों, तो इसके संभावित जोखिम खेतों से होते हुए खाद्य श्रृंखला और भूजल तक पहुँच सकते हैं।

सबसे पहले जोखिम उन कृषिकों को होता है जो प्रत्यक्ष रूप से इस जल के संपर्क में आते हैं। इसके बाद यह प्रभाव पशुधन, सिंचित फसलों, खाद्य श्रृंखला तथा उपभोक्ताओं तक पहुँच सकता है। यदि ऐसे प्रदूषक मिट्टी में एकत्रित होकर भूजल तक पहुँच जाएँ, तो उनका प्रभाव उन लाखों लोगों पर भी पड़ सकता है जो पेयजल के लिए भूजल पर निर्भर हैं।

यहाँ एक महत्वपूर्ण तथ्य ध्यान देने योग्य है कि भारत में लगभग 85 प्रतिशत ग्रामीण पेयजल और 60 प्रतिशत सिंचाई आवश्यकताएँ भूजल से पूरी होती हैं। ऐसे में जल गुणवत्ता से जुड़ा कोई भी निर्णय केवल कृषि क्षेत्र का विषय नहीं रह जाता, बल्कि राष्ट्रीय जनस्वास्थ्य का विषय बन जाता है।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में, जहाँ हजारों नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों में उपचार तकनीक, संचालन क्षमता तथा निगरानी व्यवस्थाएँ एक समान नहीं हैं, वहाँ उपचारित जल के कृषि उपयोग को बढ़ावा देने से पहले जनस्वास्थ्य सुरक्षा के लिए स्पष्ट उत्तरदायित्व, कठोर गुणवत्ता मानक तथा पारदर्शी निगरानी प्रणाली स्थापित करना अत्यंत आवश्यक है।

अंततः प्रश्न केवल यह नहीं है कि उपचारित जल का उपयोग किया जाए या नहीं, बल्कि यह है कि क्या हम उसके उपयोग की अनुशंसा करने से पहले उससे जुड़े स्वास्थ्य जोखिमों की जिम्मेदारी लेने के लिए भी तैयार हैं?

कृषि उपयोग बनाम पारिस्थितिक पुनर्जीवन: जोखिम और लाभ का संतुलन

उपचारित जल के विभिन्न उपयोगों की सुरक्षा और प्रभावशीलता को मापने के लिए मानदंड

उपचारित अपशिष्ट जल के पुनः उपयोग पर चर्चा करते समय प्रायः दो दृष्टिकोण सामने आते हैं। पहला, इसका उपयोग सीधे कृषि एवं उद्योगों में किया जाए ताकि ताजे जल पर निर्भरता कम हो। दूसरा, इसका उपयोग सूखती नदियों, आर्द्रभूमियों और अन्य पारिस्थितिक तंत्रों के पुनर्जीवन के लिए किया जाए। किंतु इस बहस को अक्सर अत्यधिक सरलीकृत रूप में प्रस्तुत कर दिया जाता है - मानो कृषि उपयोग जोखिमपूर्ण है और पारिस्थितिक पुनर्जीवन पूर्णतः सुरक्षित। वास्तविकता इससे कहीं अधिक जटिल है।

वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चलता है कि उपचारित अपशिष्ट जल में औषधीय अवशेष, एंटीबायोटिक प्रतिरोधी जीवाणु, माइक्रोप्लास्टिक तथा अन्य उभरते प्रदूषक पूरी तरह समाप्त नहीं हो पाते। इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि जोखिम है या नहीं, बल्कि यह है कि उसका स्तर, प्रभाव क्षेत्र और नियंत्रण की क्षमता क्या है।

कृषि उपयोग में उपचारित जल सीधे खाद्य उत्पादन प्रणाली से जुड़ जाता है। फसलें, पशुधन, किसान और उपभोक्ता सभी इसके संपर्क में आ सकते हैं, जिससे प्रदूषकों के खाद्य श्रृंखला में प्रवेश की संभावना बढ़ जाती है। इसके विपरीत, नदी, आर्द्रभूमि और जलाशय पुनर्जीवन में जोखिम मुख्यतः पारिस्थितिक तंत्र, अवसादों और भूजल से संबंधित होते हैं तथा मानव संपर्क अपेक्षाकृत अप्रत्यक्ष रहता है।

प्राकृतिक प्रक्रियाएँ—अवसादन, तनुकरण, जैविक अवशोषण एवं प्राकृतिक शोधन—उपचारित जल के उपयोग से जुड़े जोखिमों को कम करने में सहायक होती हैं। अतः किसी भी विकल्प का मूल्यांकन केवल "सुरक्षित" या "असुरक्षित" के आधार पर नहीं, बल्कि जोखिम–लाभ (Risk–Benefit) के वैज्ञानिक विश्लेषण पर होना चाहिए।

निर्णय से पहले पाँच प्रश्न

- जोखिम की वास्तविक मात्रा कितनी है?
- मानव संपर्क की संभावना कितनी है?
- जोखिम की निगरानी एवं नियंत्रण कितना संभव है?
- संभावित प्रभाव प्रतिवर्तनीय (Reversible) है या नहीं?
- दीर्घकालिक लाभ और स्थिरता कितनी है?

प्रश्न यह नहीं कि उपचारित जल कहाँ जाए; बल्कि इस बात का है कि कौन-सा जोखिम समाज के लिए अधिक स्वीकार्य है।

मृदा स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव: अदृश्य लेकिन महत्वपूर्ण चुनौती

उपचारित अपशिष्ट जल के कृषि उपयोग से सिंचाई जल की उपलब्धता बढ़ सकती है तथा नाइट्रोजन, फॉस्फोरस जैसे पोषक तत्वों के कारण उर्वरकों की आवश्यकता भी कुछ हद तक कम हो सकती है। किंतु इसका दीर्घकालिक प्रभाव मृदा स्वास्थ्य पर भी समान रूप से विचारणीय है।

मृदा केवल फसल उगाने का माध्यम नहीं, बल्कि एक जीवित पारिस्थितिक तंत्र है। उपचारित जल के निरंतर उपयोग से लवण, सोडियम, सूक्ष्म प्रदूषक, औषधीय अवशेष एवं माइक्रोप्लास्टिक मृदा में धीरे-धीरे एकत्रित हो सकते हैं, जिससे मृदा संरचना, जल धारण क्षमता, सूक्ष्मजीव समुदाय तथा कृषि उत्पादकता प्रभावित होने की संभावना रहती है।

भारत जैसे देश में, जहाँ पहले से ही मृदा कार्बन की कमी, भूमि क्षरण एवं पोषक तत्व असंतुलन जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं, यह विषय और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।

अंततः प्रश्न यह नहीं है कि उपचारित जल आज फसल उगा सकता है या नहीं, बल्कि यह है कि क्या वह आने वाले दशकों तक मृदा की उत्पादकता और स्वास्थ्य को बनाए रख सकेगा। जल की कमी को वैकल्पिक स्रोतों से पूरा किया जा सकता है, किंतु क्षतिग्रस्त मृदा का पुनर्जीवन अत्यंत कठिन, महंगा और समयसाध्य होता है। इसलिए उपचारित जल का उपयोग केवल जल उपलब्धता के आधार पर नहीं, बल्कि मृदा स्वास्थ्य की दीर्घकालिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

मानसूनी जलविज्ञान और प्रकृति की आत्मशोधन क्षमता: भारत का प्राकृतिक पुनर्जीवन तंत्र

भारत को प्रतिवर्ष लगभग 4,000 BCM वर्षा प्राप्त होती है, जिसका अधिकांश भाग मानसून के कुछ महीनों में होता है। यह वर्षाजल नदियों, नालों, झीलों, तालाबों एवं आर्द्रभूमियों के माध्यम से बहते हुए भूजल का पुनर्भरण करता है, पोषक तत्वों एवं अवसादों का पुनर्वितरण करता है तथा प्रदूषकों के तनुकरण (Dilution) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

जब उपचारित अपशिष्ट जल का उपयोग नालों, तालाबों, झीलों एवं आर्द्रभूमियों के पुनर्जीवन में किया जाता है, तो ये जल निकाय एकीकृत जलवैज्ञानिक तंत्र का हिस्सा बन जाते हैं। गैर-मानसूनी अवधि में वे पारिस्थितिक प्रवाह, भूजल पुनर्भरण एवं जैव विविधता को समर्थन देते हैं, जबकि मानसून के दौरान प्राकृतिक फ्लशिंग, तनुकरण, अवसादन तथा जैविक प्रक्रियाएँ संचित पदार्थों का पुनर्वितरण कर जल तंत्र के संतुलन को बनाए रखने में सहायता करती हैं।

वास्तव में नदियाँ केवल जल प्रवाह के मार्ग नहीं हैं; वे प्रकृति की जीवंत प्रसंस्करण प्रणालियाँ (Natural Processors) हैं। वे पोषक तत्वों का चक्रण करती हैं, कार्बनिक पदार्थों का पुनर्वितरण करती हैं, अवसादों का परिवहन करती हैं और स्थलीय पारितंत्रों से लवणों को समुद्र तक पहुँचाकर प्राकृतिक लवण चक्र को पूर्ण करती हैं। यही प्रक्रियाएँ हजारों वर्षों से भारतीय भू-दृश्य को संतुलित बनाए हुए हैं।

अंततः प्रश्न केवल यह नहीं है कि उपचारित जल का पुनः उपयोग कहाँ किया जाए, बल्कि यह भी है कि भारत की मानसूनी जलविज्ञान, प्राकृतिक फ्लशिंग क्षमता और पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए उसका उपयोग किस प्रकार किया जाए। संभवतः यही वह दृष्टिकोण है जो जल पुनः उपयोग को केवल जल प्रबंधन का विषय न बनाकर, प्रकृति के साथ समन्वित जल प्रबंधन का आधार बना सकता है।

याद रखिए !
नदियाँ
केवल बहती नहीं,
संतुलन भी
बनाती हैं !

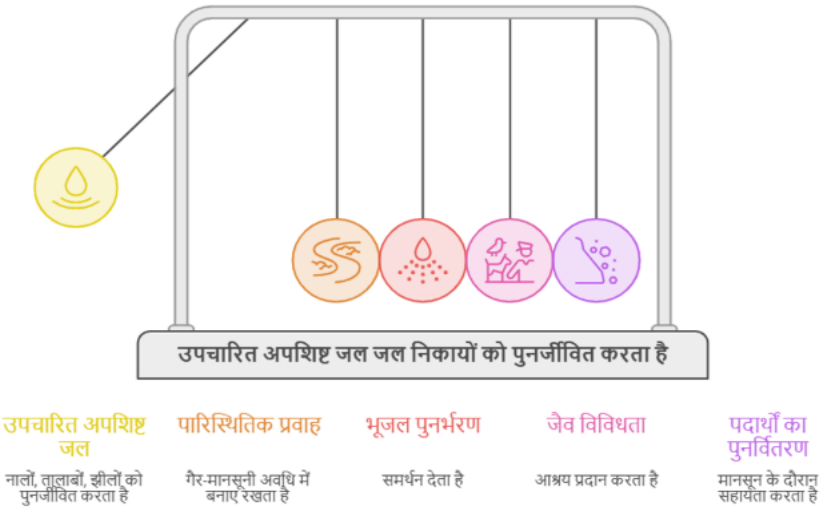

ऊर्जा, अर्थव्यवस्था और सार्वजनिक हित: उपचारित जल के उपयोग का व्यापक परिप्रेक्ष्य

उपचारित अपशिष्ट जल के पुनः उपयोग का मूल्यांकन केवल जल उपलब्धता के आधार पर नहीं, बल्कि ऊर्जा आवश्यकता, आर्थिक व्यवहार्यता, पर्यावरणीय प्रभाव तथा समाज को मिलने वाले समग्र लाभों के आधार पर भी किया जाना चाहिए।

कृषि उपयोग के लिए उपचारित जल को पूर्णतः सुरक्षित बनाने हेतु झिल्ली आधारित तकनीक, UV, ओज़ोनेशन, सक्रिय कार्बन तथा रिवर्स ऑस्मोसिस जैसी उन्नत उपचार प्रणालियों की आवश्यकता हो सकती है। यद्यपि ये तकनीकें जल की गुणवत्ता बढ़ाती हैं, परंतु इनके साथ ऊर्जा खपत, कार्बन उत्सर्जन, पूंजीगत निवेश एवं परिचालन लागत भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ जाती है।

भारत में सिंचाई जल का आर्थिक मूल्य अपेक्षाकृत कम तथा कृषि क्षेत्र की भुगतान क्षमता सीमित होने के कारण ऐसी प्रणालियों की दीर्घकालिक आर्थिक व्यवहार्यता एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

इसके विपरीत, यदि उपचारित जल का उपयोग नदियों, आर्द्रभूमियों, झीलों एवं अन्य जल निकायों के पुनर्जीवन में किया जाए, तो इसके लाभ पूरे समाज को प्राप्त होते हैं। इससे भूजल पुनर्भरण, जैव विविधता संरक्षण, पर्यावरणीय प्रवाह, कार्बन अवशोषण, बाढ़ नियंत्रण, शहरी तापमान में कमी तथा स्थानीय जल सुरक्षा जैसी अनेक पारिस्थितिक सेवाएँ सुदृढ़ होती हैं।

किसी भी जल नीति की सफलता पुनर्प्राप्त जल की मात्रा से नहीं, बल्कि उससे सृजित लोकहित, पारिस्थितिक संतुलन और दीर्घकालिक जल सुरक्षा से मापी जानी चाहिए।

उपचारित जल से पारिस्थितिक पुनर्जीवन और संसाधन पुनर्प्राप्ति

यदि वैज्ञानिक मानकों के अनुरूप उपयोग किया जाए, तो उपचारित जल का प्रयोग सूखते तालाबों, झीलों, आर्द्रभूमियों, नालों एवं धाराओं के पुनर्जीवन तथा न्यूनतम पर्यावरणीय प्रवाह (E-Flows) बनाए रखने में किया जा सकता है। इससे केवल जल उपलब्धता ही नहीं बढ़ती, बल्कि भूजल पुनर्भरण, जैव विविधता संरक्षण और स्थानीय पारिस्थितिक संतुलन भी सुदृढ़ होता है।

इस दिशा में प्रकृति-आधारित उपचार प्रणालियाँ (Nature-Based Solutions) जैसे निर्मित आर्द्रभूमियाँ (Constructed Wetlands), ऑक्सीकरण तालाब, पारिस्थितिक लैगून तथा रिपेरियन तंत्र—विशेष महत्व रखती हैं। ये कम ऊर्जा में जल की गुणवत्ता सुधारने के साथ-साथ पक्षियों, मछलियों एवं अन्य जलीय जीवों के लिए प्राकृतिक आवास भी उपलब्ध कराती हैं।

हालाँकि जल निकायों के पुनर्जीवन में सुपोषण (Eutrophication) की चुनौती बनी रहती है। किंतु भारतीय परिस्थितियों में पोषक तत्व केवल उपचारित जल से नहीं, बल्कि कृषि अपवाह, पशुपालन, भूजल, अपरदन एवं वायुमंडलीय निक्षेपण से भी आते हैं। इसलिए उद्देश्य पोषक तत्वों का पूर्ण उन्मूलन नहीं, बल्कि उनका संतुलित प्रबंधन एवं पारिस्थितिक चक्रण होना चाहिए।

यहीं संसाधन पुनर्प्राप्ति की अवधारणा महत्वपूर्ण बनती है। जलीय वनस्पतियों एवं शैवालों की नियंत्रित कटाई द्वारा संचित नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं कार्बनिक कार्बन को पुनः प्राप्त कर कम्पोस्ट, जैव उर्वरक, बायोचार अथवा ऊर्जा उत्पादन में उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार प्रदूषण माने जाने वाले पोषक तत्व पुनः मूल्यवान संसाधन में परिवर्तित हो सकते हैं।

जल पुनः उपयोग से आगे: पारिस्थितिक पुनर्जीवन, रोजगार और भारत की जल सुरक्षा

उपचारित अपशिष्ट जल का महत्व केवल जल उपलब्धता बढ़ाने तक सीमित नहीं है। यदि इसे पारिस्थितिक पुनर्जीवन से जोड़ा जाए, तो यह हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy) का आधार बन सकता है। आर्द्रभूमि प्रबंधन, जैवभार प्रसंस्करण, मत्स्य पालन, पारिस्थितिक पर्यटन, हरित रोजगार तथा कार्बन क्रेडिट जैसी गतिविधियाँ स्थानीय स्तर पर आजीविका और आर्थिक अवसरों का सृजन कर सकती हैं। इस प्रकार उपचारित जल केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक विकास का माध्यम भी बन सकता है।

यद्यपि यह समाधान पूर्णतः जोखिममुक्त नहीं है। सुपोषण (Eutrophication), शैवाल प्रस्फुटन, माइक्रोप्लास्टिक, औषधीय अवशेष तथा भूजल पर संभावित प्रभाव जैसी चुनौतियों का समाधान उचित उपचार, नियमित निगरानी, जल निकायों की वहन क्षमता के आकलन तथा अनुकूली प्रबंधन (Adaptive Management) से ही संभव है।

भारतीय परिस्थितियों—विशाल मानसूनी वर्षा, विस्तृत नदी तंत्र और बढ़ती पारिस्थितिक क्षति—को देखते हुए उपचारित अपशिष्ट जल का उपयोग तालाबों, झीलों, आर्द्रभूमियों, नालों एवं क्षतिग्रस्त नदी तंत्रों के पुनर्जीवन में अनेक परिस्थितियों में प्रत्यक्ष कृषि उपयोग की तुलना में अधिक व्यापक सामाजिक, पारिस्थितिक एवं आर्थिक लाभ प्रदान कर सकता है।